डॉ. सोबन सिंह रावत, डॉ. सुधीर कुमार
एवं डॉ. दीपक सिंह बिष्ट

क्षेत्रीय जल सुरक्षा में पर्वतीय झरनों की उपयोगिता-भारतीय परिपेक्ष

पर्वतीय क्षेत्रों की अगर जनसांख्यिकी देखी जाए तो प्राचीन काल से यहाँ के स्थानीय लोग सामरिक एवं सुरक्षा की दृष्टि से छोटी-छोटी पहाड़ की चोटियों पर बसे हुए हैं। इसके कारण घाटी में बहने वाले नदी के जल को चोटियों पर बसे गावों तक पहुँचाना आर्थिक रूप से संभव नहीं है। अतः गांवों के पास निकलने वाले झरने ही गांवों की जलापूर्ति के मुख्य स्रोत हैं या यूँ कहें कि पर्वतीय क्षेत्रों में गांव इन झरनों के पास ही बसाये गए हैं। आज भी यहाँ की महिलाओं और बच्चों की कतारें इन झरनों से पानी ढोते हुए देखी जा सकती हैं। गर्मियों के मौसम में गांव के झरने सूख जाने या जल प्रवाह कम हो जाने पर इनको निकट के झरनों से पानी लाने के लिए ज्यादा दूरी तय करनी पड़ती है।

विश्वभर के पर्वतीय क्षेत्रों (उदाहरणार्थ भारत, अमेरिका, न्यूजीलैंड, इथियोपिया, तुर्की, स्पेन, ग्रीस आदि) की जनसंख्या के लिए वहाँ के स्थानीय जल स्रोत यानि पर्वतीय झरने (springs) जल सुरक्षा के महत्वपूर्ण और भरोसेमंद स्रोत हैं। भारतीय हिमालयी क्षेत्र में रहने वाले 5 करोड़ से अधिक लोग अपनी पानी की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए झरनों पर निर्भर हैं। उत्तराखंड, सिक्किम इत्यादि पर्वतीय राज्यों की 90% पेयजल आपूर्ति झरनों पर निर्भर करती है। जबकि मेघालय जैसे कुछ राज्यों में, लगभग सभी गाँव पीने, सिंचाई या अन्य उद्देश्यों के लिए झरनों पर निर्भर हैं। केवल हिमालय ही नहीं, भारत की अन्य पर्वत श्रृंखलाओं जैसे नीलगिरी, सह्याद्रि और पूर्वी घाट श्रृंखलाओं में भी ये प्राकृतिक झरने पीने, सिंचाई, पशुधन, जैव विविधता, उद्योग आदि के लिए स्वच्छ जल की आपूर्ति सुनिश्चित कर स्थानीय निवासियों तथा पारिस्थितिक तंत्र को बनाये रखने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। इसके अतिरिक्त, ये झरने कई नदियों के जल प्रवाह को वर्ष भर, विशेषकर शुष्क मौसम में भी बनाए रखते हैं। वास्तव में, उत्तर, मध्य और दक्षिण भारत में बहने वाली कई नदियां मुख्य रूप से कई झरनों के सामूहिक प्रवाह से उत्पन्न हुई हैं। उच्च हिमालय क्षेत्र से निकलने वाली नदियाँ मुख्य रूप से बर्फ/हिमनदों के पिघलने से निकलती हैं लेकिन आगे बढ़ने पर इन नदियों में झरनों का योगदान बढ़ता रहता है और संभवतः यह योगदान बर्फ/हिमनदों से भी अधिक हो जाता है। जबकि निम्न हिमालयी क्षेत्रों में ये झरने नदियों के उद्गम का कारण बनते हैं। इन झरनों पर आधारित विभिन्न परियोजनाओं के आधार पर एक अनुमान के अनुसार समूचे हिमालयी क्षेत्र में इन झरनों की संख्या लगभग 3 से 5 मिलियन तक होने का अनुमान लगाया गया है। एक अनुमान के अनुसार भारत की लगभग 20 करोड़ यानि 15% जनसंख्या इन झरनों पर अपनी जलमांग के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से निर्भर है।

पर्वतीय क्षेत्रों की अगर जनसांख्यिकी देखी जाए तो प्राचीन काल से यहाँ के स्थानीय लोग सामरिक एवं सुरक्षा की दृष्टि से छोटी-छोटी पहाड़ की चोटियों पर बसे हुए हैं। इसके कारण घाटी में बहने वाले नदी के जल को चोटियों पर बसे गावों तक पहुँचाना आर्थिक रूप से संभव नहीं है। अतः गांवों के पास निकलने वाले झरने ही गांवों की जलापूर्ति के मुख्य स्रोत हैं या यूँ कहें कि पर्वतीय क्षेत्रों में गांव इन झरनों के पास ही बसाये गए हैं। आज भी यहाँ की महिलाओं और बच्चों की कतारें इन झरनों से पानी ढोते हुए देखी जा सकती हैं। गर्मियों के मौसम में गांव के झरने सूख जाने या जल प्रवाह कम हो जाने पर इनको निकट के झरनों से पानी लाने के लिए ज्यादा दूरी तय करनी पड़ती है। इन झरनों को अलग-अलग राज्यों में इनके स्थानीय नाम से जाना जाता है, जैसे जम्मू एवं कश्मीर में ये पर्वतीय झरने नाग और चश्मा, लद्दाख में चूयूमिक, हिमाचल प्रदेश में पनिहार, नाडू, चेरवु, बाबड़ी, उत्तराखंड में पनहरा, धारा एवं नौला, तथा पूर्वोत्तर राज्यों में धारा आदि।

कैसे बनते हैं ये झरने?

वास्तव में ये झरने पर्वतीय क्षेत्रों में

भारत में झरनों के पाए जाने वाले मुख्य क्षेत्र।

भूजल का एक रूप है जो विशेष दशा में जमीन से बाहर आते हैं। झरनों के बनने के लिए विशेष रूप से स्थानीय भूवैज्ञानिक संरचनाएं उत्तरदायी होती हैं। सामान्यतः हमारे देश में पांच प्रकार के पर्वतीय झरने पाए जाते हैं जो निम्नवत हैं:-

(1) डिप्रेशन (Depression) या गुरुत्वाकर्षण झरने

इस प्रकार के झरने उस स्थान पर उत्पन्न होते हैं जहाँ स्थलाकृति के कारण पृथ्वी की सतह, भू-जल स्तर को काटती है। इस प्रकार के झरने अपुष्ट जलभृतों (Unconfined aquifer) से उत्पन्न होते हैं और सामान्यतः मौसमी होते हैं।

(2) कॉन्टैक्ट झरने (Contact Spring)

इस प्रकार के झरने उन संपर्कों पर निकलते हैं जहां अपेक्षाकृत पारगम्य चट्टानें कम पारगम्यता की चट्टानों के ऊपर होती हैं।

(3) भंग (fracture) या भ्रंश (fault) झरने

इन झरनों में पहाड़ की चट्टानों के आपस में जुड़े हुए जोड़ों (joints) या भंग की एक प्रणाली के माध्यम से भूजल सतह पर आता है। इस प्रकार के झरने के जल प्रवाह की दर एवं निरंतर बहने वाला काल, चट्टान की सरंध्रता और पारगम्यता पर निर्भर करता है।

(4) क्रास्ट झरने (Karst spring)

रासायनिक अभिक्रिया द्वारा पहाड़ की कार्बोनेट चट्टानों (चूना पत्थर, डोलोमाइट्स, आदि) में विघटन के कारण गुहाएं (cavities) बन जाती हैं। पानी इन गुहाओं के माध्यम से जमीन के अंदर बहता रहता है और आदर्श परिस्थिति मिलने पर वह जमीन के अंदर से क्रास्ट झरने के रूप में बाहर निकलता है। इस प्रकार के झरने कश्मीर क्षेत्र में बहुतायत में मिलते हैं।

उपर्युक्त चार प्रकार के झरनों के अलावा गर्म पानी के झरने भी देश के विभिन्न हिस्सों में देखने को मिलते हैं। दरअसल देश में ऐसे कुछ विशेष भूतापीय क्षेत्र हैं जहाँ भूगर्भ में ऊष्मा का प्रवाह 70 मिली वाट प्रति वर्ग मीटर से भी अधिक है। ऐसे क्षेत्रों में झरने का जल इस ऊष्मा प्रवाह के सम्पर्क में आने से गर्म हो जाता है अतः ऐसे क्षेत्रों में गर्म पानी के झरनें मिलने की संभावना प्रबल होती है। लद्दाख क्षेत्र में पनामिक; हिमाचल में खीरगंगा, मणिकरण; उत्तराखंड में गौरीकुंड, तपोवन; पश्चिमी बंगाल में बकरेश्वर, इत्यादि गर्म पानी के झरनों के मुख्य उदाहरण हैं।

तेजी से सूखते पहाड़ी झरने

भारतवर्ष में पिछले दो दशकों में, कई झरने या तो सूख गए हैं या मौसमी बन गए हैं। बढ़ती जनसंख्या और अनियोजित विकास ने इन झरनों की पुनर्भरण प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है और इसके परिणामस्वरूप पूरे हिमालयी क्षेत्र में इस प्रमुख जल संसाधन का ह्रास हुआ है। इसके अलावा, हवा के बढ़ते तापमान, मानसून में अनिश्चितता अथवा विलम्ब, वर्षा की तीव्रता का बढ़ना और वर्षा काल का सिमटना, विशेषकर जाड़े के मौसम की वर्षा का कम होना, इत्यादि ऐसे मुख्य कारण हैं जिससे इन झरनों को पोषित करने वाले जलभृत (aquifer) उचित मात्रा में पुनर्भरित नहीं हो पाते हैं। एक अनुमान के अनुसार लगभग 50% से भी अधिक झरने या तो सूख चुके हैं या मौसमी बन गये हैं। हिमालयी क्षेत्र के विभिन्न भागों में जलस्रोतों के सूखने की विभीषिका दर्शाते कुछ आकड़े निम्न हैं:

- पूर्वी हिमालयी क्षेत्र में, जहां लगभग 80% ग्रामीण आबादी पीने के पानी और घरेलू आवश्यकताओं के लिए झरनों पर निर्भर है, एक अनुमान के अनुसार लगभग 8,000 गांव झरनों के सूखने के कारण पानी की गंभीर कमी का सामना कर रहे हैं।
- हिमाचल प्रदेश विज्ञान, प्रौद्योगिकी और पर्यावरण परिषद ने हिमाचल प्रदेश के सात जिलों की 169 पंचायतों के सर्वेक्षण में पाया कि केवल 30% परम्परागत जल स्रोत अच्छी स्थिति में थे और पूरे वर्ष ठीक से पोषित हो पा रहे थे, जबकि 70% स्रोतों की स्थिति अत्यंत चिंताजनक थी जिनका निकट भविष्य में सूखना संभावित था।
- कई अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकला है कि निचले हिमालयी क्षेत्रों में झरनों का जल प्रवाह कम हो रहा है। उत्तराखंड क्षेत्र में पिछले 5 से 50 वर्षों में झरनों के प्रवाह में कमी 25% से 75% के बीच पाई गई, जिससे कई बारहमासी धारे तो मौसमी धारों में परिवर्तित हो गए हैं।
- तवी नदी जो कि 400 से भी ज्यादा मुख्य झरनों के सयुंक्त जल प्रवाह से बहती है, पूरे जम्मू क्षेत्र के लिए सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक रूप से बहुत ही महत्पूर्ण नदी है। यह घरेलू खपत के साथ-साथ कृषि और औद्योगिक जरूरतों के लिए भी पानी का प्रमुख स्रोत है और जम्मू एवं कश्मीर संघीय क्षेत्र की 20% से अधिक जनसंख्या के लिए जीवन रेखा का काम करती है। एक शोध के अनुसार तवी नदी के दीर्घकालिक जल प्रवाह आकड़ों के रुझान विश्लेषण से पता चलता है कि वसंत ऋतु के दौरान इस नदी के जल प्रवाह में प्रति वर्ष 0.639 क्यूमेक्स (Cumecs) की एक आश्चर्यजनक कमी आई है जो इस बात का संकेत है कि यदि इसके जलागम क्षेत्र में सूखते झरनों की समस्या का शीघ्र ही समाधान नहीं किया जाता है तो आने वाले वर्षों में इस बारहमासी नदी का मौसमी धारा में परिवर्तन अवश्यंभावी है।

- उत्तराखंड में पिछले एक दशक में जनसंख्या का सूचकांक 17 लाख से अधिक बढ़ा है यानि सीधे तौर पर प्रतिदिन 2 करोड़ लीटर पानी की खपत भी बढ़ गयी, जबकि इसके विपरीत पानी के 500 स्रोत सूखे की तरफ बढ़ रहे हैं। उत्तराखंड राज्य के 500 पेयजल सोतों में से 93 स्रोत ऐसे हैं जिनमें 90 फीसदी पानी सूख गया है जबकि 268 स्रोतों में 75% से अधिक एवं 139 में 50% से अधिक की गिरावट दर्ज की गयी है।
- छत्तीसगढ़ के चिरिमिरी क्षेत्र में 300 में से लगभग 20 झरने हर दस साल में सूख रहे हैं। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि इस क्षेत्र में केवल ये झरने ही मीठे पानी के स्रोत हैं।

तालिका : हिमालयी झरनों की संख्या पर उपलब्ध सीमित आंकड़े

राज्य	कुल गांव	झरनायुक्त गांव	झरनायुक्त गांव का प्रतिशत
अरूणाचल प्रदेश	5,589	2,086	37.3
असम	26,395	2,997	11.4
मणिपुर	2,581	1,405	54.4
मेघालय	6,839	3,810	55.7
मिजोरम	830	453	54.6
नागालैंड	1428	639	44.7
सिक्किम	451	425	94.2
त्रिपुरा	875	141	16.1
पश्चिमी बंगाल (केवल दार्जिलिंग)	688	221	32.1
हिमाचल प्रदेश	20,690	2,597	12.6
जम्मू और कश्मीर (लद्दाख सहित)	6,553	3,313	50.6
उत्तराखंड	16,793	594	3.5
समस्त हिमालयी प्रदेश	89,712	18,681	20.8

क्या हैं झरनों के सूखने के मुख्य कारण?

सामान्यतः इन झरनों के सूखने के दो मुख्य कारण (1) मानवजनित गतिविधियों के दुष्परिणाम, तथा (2) जलवायु परिवर्तन हैं। विगत पचास वर्षों (1961-2011) में इस क्षेत्र की जनसंख्या 3.3% वार्षिक वृद्धि (यानी वैश्विक औसत से तीन गुना अधिक) से बढ़ी है। इस तेजी से बढ़ती जनसंख्या की आपूर्ति के लिए जल मांग काफी बढ़ी है जिस कारण इन सीमित जल संसाधनों पर अतिरिक्त बोझ बढ़ गया है। साथ ही इस बढ़ी जनसंख्या के कारण गांव और कस्बे तेजी से फैलते जा रहे हैं जिसके कारण इन जल स्रोतों के पुनर्भरण क्षेत्र में अतिक्रमण बढ़ा है तथा यहाँ की भू-जलविज्ञानीय प्रणाली पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है और इनके निरंतर सूखने के या जल प्रवाह में कमी आने के मामले आजकल आम हो गये हैं।

जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप अनियमित वर्षा के कारण जलभृतों का पर्याप्त पुनर्भरण नहीं हो पा रहा है। जिसके कारण इन झरनों के सूखने की दर में तेजी आयी है। पिछले दो दशकों (1990-2010) में सिक्किम में बरसात के दिनों की संख्या और कुल वार्षिक वर्षा में 0.72 दिन/वर्ष और 17.77 मिमी/वर्ष की कमी आई है जो कि चिंताजनक है। हाल के जलवायु परिवर्तन प्रभावों से संकेत मिलता है कि उपोष्णकटिबंधीय इलाकों (समुद्रतल से लगभग 1000 मीटर ऊंचाई) में अक्टूबर से मार्च के दौरान पहले की तुलना में वर्षा दिवस काफी कम हुए हैं। जाड़े की वर्षा इन जल स्रोतों का प्रवाह गर्मी के मौसम में भी बनाये रखने के लिए महवत्पूर्ण होती है।

अगर इनके सूखने के कारणों की तह में जायेंगे तो यह पता चलेगा कि इन जल स्रोतों के सूखने की तीव्रता अभी पिछले 2-3 दशक में ज्यादा बढ़ी है। वास्तव में पुराने समय में स्थानीय निवासियों द्वारा इनके संक्षरण के लिए कुछ परम्परागत रीतियां बना रखी थी जैसे इन जलस्रोतां को भगवान का निवास स्थान माना जाता था जिसके लिए इसके पास एक मंदिर का निर्माण या पवित्र वृक्ष लगाया जाता था ताकि इस स्थान पर कोई किसी भी प्रकार का अतिक्रमण या गन्दगी न कर सके। इसके साथ प्रकृति के संक्षरण के लिए विभिन्न त्यौहार जैसे हरेला, हरियाली, रिंह्याली, मैती, सरहुल इत्यादि मनाये जाते थे जिनका मूल उद्देश्य प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से जल, जंगल और जमीन का संक्षरण करने का होता था।

क्या कारण हैं कि ये महत्वपूर्ण झरने हमारी मुख्य धारा का अंग नहीं बन पाए

यहाँ पर यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इतने महत्वपूर्ण जल स्रोत जो पर्वतीय क्षेत्रों की जीवन रेखा हैं, क्यों हमारी मुख्य नीति से अछूते रहे? नीति आयोग, भारत सरकार द्वारा इन सभी पहलुओं को गहराई से जानने के लिए वर्ष 2017 में "इन्वेंटरी एंड रिवाइवल ऑफ़ स्प्रिंग्स इन द हिमालय फॉर वाटर सिक्योरिटी" नाम से एक कार्यकारी समूह (Working Group) का गठन किया। इस कार्यकारी समूह ने अपनी रिपोर्ट में हिमालयी जल स्रोतों पर मूलभूत आंकड़ों की अनुपुलब्धता को इन महत्वपूर्ण जल संसाधनों को विभिन्न

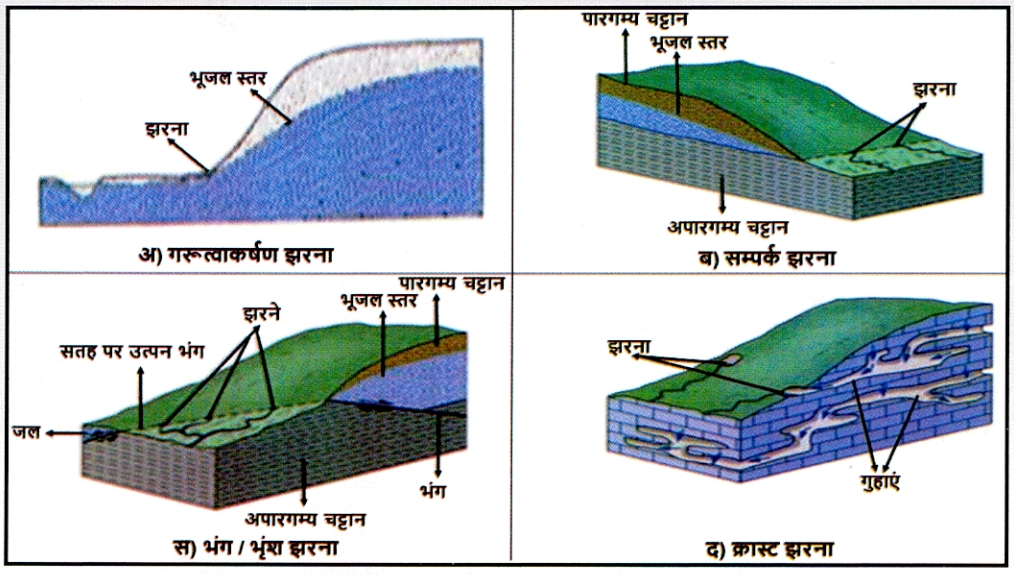

सरकारी योजनाओं में यथोचित स्थान न मिल पाने का मुख्य कारण बताया।

नीति आयोग के कार्यकारी समूह द्वारा विभिन्न राज्यों से इन जल स्रोतों के आंकड़े जुटाए गए और इन आंकड़ों से एक आश्चर्यजनक बात सामने आयी कि उत्तराखंड और हिमाचल प्रदेश जैसे हिमालयी राज्यों के केवल क्रमशः 3.5% एवं 12.6% गांव ही ऐसे हैं जिनमें ये झरने हैं। ये आंकड़े निःसंदेह इन जल स्रोतों की वास्तविक संख्या को काफी कम करके आंकते हैं। अतः आयोग की इस रिपोर्ट में स्पष्टतः पूरे हिमालयी झरनों की वेब आधारित सूची/पोर्टल बनाने पर जोर दिया गया। इस वेब प्रणाली विकसित होने पर विकास कार्यों के दौरान इन जल स्रोतों के पुनर्भरण क्षेत्र को क्षति पहुंचाने से बचाया जा सकता है। साथ ही पोर्टल पर उपलब्ध जानकारी के आधार पर अतिसंवेदनशील झरनें चिन्हित कर प्राथमिकता के आधार पर उनका उपचार कर उन्हें सूखने से बचाया जा सकता है। विकसित डेटाबेस के आधार पर उपचार के लिए चलायी जा रही परियोजनाओं का प्रभावशाली मूल्यांकन किया जा सकता है ताकि इनके उपचार के लिए और अधिक प्रभावशाली वैज्ञानिक क्रियाविधि विकसित की जा सके।

प्रदेश के जलग्रहण क्षेत्र से निकलने वाले 925 झरनों एवं तवी नदी, जम्मू एवं कश्मीर के जलग्रहण क्षेत्र से निकलने वाले लगभग 400 झरनों के 35 से अधिक मापदण्डों की जानकारी उपलब्ध कराता है।

क्या है समाधान?

झरनों का पुनरुद्धार समय की मांग है और इस बहुमूल्य परम्परागत संसाधन को विलुप्त होने से बचाने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वैज्ञानिक अध्ययन के साथ इसके लोक ज्ञान को मिश्रित कर इसके पुनर्जीवीकरण के लिए एक ठोस योजना बनाई जाए। सरकारी और गैर-सरकारी अभ्यारण्य विकास कार्यक्रम (Spring Sanctuary Development Programme) झरनों को उपभोज्य जल का एक भरोसेमंद और टिकाऊ स्रोत बनाने की सर्वोत्तम प्रणाली है। झरना अभ्यारण्य विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत एक समग्र दृष्टिकोण वाली छः चरणों की पद्धति विकसित की गयी है। इसमें प्रथम चरण ''झरनों का मानचित्रीकरण'' का उद्देश्य सभी झरनों को एक वेब पोर्टल पर जिओटैगिंग कर उनके बारे में मूलभूत जानकारी एकत्रित करना है। एकत्रित जानकारी के आधार पर उपयुक्त मानक तय कर ऐसे झरनों को चिन्हित किया जा सकता है जिनको

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की द्वारा राष्ट्रीय जलविज्ञान परियोजना के अंतर्गत रावी नदी जलग्रहण क्षेत्र, हिमाचल प्रदेश के झरनों हेतु विकसित भौगोलिक सूचना प्रणाली आधारित वेब-पोर्टल।

आधारित पोर्टल पर सभी केंद्र और राज्य सरकार की संस्थाओं के साथ-साथ गैर सरकारी संस्थाएं उनके द्वारा चिन्हित झरनों की जियोटैगिंग कर सकतें हैं ताकि किसी भी जरूरतमंद/हितधारक को वांछित झरने के बारे में मूलभूत जानकारी एक स्थान पर संगठित रूप में मिल सके। एक बार सुसंगठित डेटाबेस प्रबंधन

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रूड़की द्वारा ईश्वर, ISHVAR (Information System for Himalayan springs for Vulnerability Assessment and Rejuvenation) नाम से एक भौगोलिक सूचना प्रणाली आधारित वेब-पोर्टल विकसित किया गया है। यह पोटर्ल एक क्लिक के माध्यम से रावी नदी, हिमाचल

संगठनों (एन.जी.ओ.) के शोधकर्ताओं के पिछले अनुभव के आधार पर यह अनुभव किया गया है कि पूरे हिमालयी क्षेत्र में लगभग सभी झरनों के जलप्रवाह में गिरावट आयी है और इसका कारण भी लगभग एक समान है। हालाँकि इनके सूखने की तीव्रता अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग है। झरना

तुरंत उपचार की आवश्यकता है। इस पद्धति का दूसरा चरण यानि ''संवेनदशील झरनों की पहचान'' है। जबकि तृतीय चरण ''मॉनिटरिंग एवं डेटाबेस'' के अन्तर्गत इन सवेंदनशील झरनों की जल प्रवाह एवं जल गुणवत्ता की निरंतर निगरानी करना निर्देशित है। चतुर्थ और सबसे महत्वपूर्ण चरण

''झरनों के जल ग्रहण क्षेत्र का मानचित्रण'' का उद्देश्य इन झरनों के संभावित जल ग्रहण क्षेत्र की पहचान कर इसको रेखांकित करना है। इसके लिए सबसे जरुरी है कि स्थानीय क्षेत्र का महीन पैमाने पर भूवैज्ञानिक मानचित्रण किया जाए। इस दौरान स्थानीय चट्टानों के भ्रंश (Fracture)और भंग (Fault) का बारीकी से विश्लेषण करना तथा इन चट्टानों के डिप कोण (Dip Angle) एवं स्ट्राइक (Strike) का पता लगाना है जिसके आधार पर भूजल के प्रवाह का आंकलन किया जाता है। इसके साथ स्थानीय चट्टानों की जल भण्डारण क्षमता (Storage capacity) एवं जल संचारण क्षमता (Transmission capacity) का भी अध्ययन किया जाता है ताकि इनसे जनित झरनों की स्थिरता एवं जल निकास क्षमता का भी आंकलन किया जा सके। झरनों के संभावित जलग्रहण क्षेत्र की पहचान के कार्य को आसान या सटीक बनाने के लिए आजकल पर्यावरणीय समस्थानिक (Environmental Isotope) तकनीक का भी सहारा लिया जा रहा है। यह तकनीक झरने के जल के वास्तविक स्रोत के बारे में जानकारी तो उपलब्ध कराती ही है साथ में संभावित जल ग्रहण क्षेत्र की ऊंचाई (Altitude) के बारे में भी बहुत महत्वपूर्ण जानकारी देती है। इसके साथ-साथ झरने के जल के रासायनिक विश्लेषण से झरने को पोषित करने वाले जलभृत किस तरह की सामग्री से निर्मित हैं, इसके बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। एक बार झरने के संभावित जल संग्रहण क्षेत्र का रेखांकन होने के बाद निरंतर दर्ज किये जा रहे आंकड़ों के आधार पर उस विशेष झरने को भविष्य में सूखने से बचाने के लिए ''अनुकूल समाधान एवं उपाय'' विकसित किये जा सकते हैं जिन्हें बाद में स्थानीय कार्यदायी संस्थाओं द्वारा कार्यान्वित किया जा सकता है। छः चरणों की इस पद्धति का सबसे अंतिम किन्तु सबसे महत्वपूर्ण चरण है ग्रामीण युवाओं को ''पैरा-हाइड्रोलॉजिस्ट'' के रूप में तैयार करना। ये पैरा-हाइड्रोलॉजिस्ट अपने गांव के साथ-साथ आस-पास के झरनों की निरंतर निगरानी कर उनके जलविज्ञान को समझ कर उनके जल प्रवाह को बनाए रखने में योगदान दे सकते हैं, जिससे गाँव स्तर की जल सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है।

पर्वतीय झरनों के सतत विकास हेतु छह-चरणीय कार्यप्रणाली।

कर उनके जलविज्ञान को समझ कर उनके जल प्रवाह को बनाए रखने में योगदान दे सकते हैं, जिससे गाँव स्तर की जल सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है।

निष्कर्ष/ सारांश

निश्चित रूप से सम्पूर्ण पर्वतीय क्षेत्रों में जल सुरक्षा सुनिश्चित करने में पहाड़ी झरनों के योगदान को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। ये आकार में छोटे ही सही लेकिन पूरे हिमालयी क्षेत्र में इनकी भूमिका बड़ी-बड़ी नदियों से भी ज्यादा अहम् है। हिमालयी झरनों की इस सभ्यता को सुरक्षित रखने हेतु इनको नीति की मुख्य धारा में उचित स्थान देने की महती आवश्यकता है। इसके साथ ही स्थानीय निवासियों के लोक ज्ञान को वैज्ञानिक तकनीकों के साथ समायोजित कर एक प्रभावशाली समाधान को विकसित करना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इन झरनों को यदि स्थानीय निवासियों की आजीविका से जोड़कर उनके अंदर एक स्वामित्व का दृष्टिकोण विकसित किया जा सके तो निःसन्देह यह इनको पुनर्जीवित करने में एक मील का पत्थर सिद्ध होगा।

यह देखा गया है कि अधिकांश झरना/धारा विकास कार्यक्रम अलग-अलग संस्थाओं द्वारा पृथक-पृथक चलाए जा रहे हैं। जबकि जरुरत है गैर-सरकारी संगठनों, अनुसंधान एवं विकास एजेंसियों (केंद्र/राज्य सरकार के संस्थानों) और विश्वविद्यालयों के बीच एक अच्छे समन्वय एवं अभिसरण की, जो जलवायु परिवर्तन और मानवजनित गतिविधियों के प्रतिकूल प्रभाव को दूर करने के लिए जमीनी आंकड़ों के आधार पर दीर्घकालिक अनुकूलन उपायों को विकसित कर इनको धरातल पर कार्यान्वित कर सकें । झरना अभ्यारणय विकास और प्रबंधन एक अंतःविषय क्षेत्र है जहां भूविज्ञान, जलविज्ञान, वायुमंडलीय विज्ञान, वानिकी, मृदा विज्ञान, समाजशास्त्र और भूमि संसाधन विषयों के विशेषज्ञों की एक टीम की आवश्यकता होती है। इसलिए प्रभावी विश्लेषण, डेटा विकास, योजना तैयार करने और कार्यान्वयन के लिए विभिन्न विभागों के बीच अच्छे समन्वय की तत्काल आवश्यकता है।

आज से लगभग दो दशक पूर्व हरित क्रांति के जनक डॉ० नार्मन ई बोरलॉग ने कहा था कि अब उत्तराखंड जैसे पर्वतीय राज्यों को ''नीली क्रांति'' की जरूरत है। इस कथन को अगर सच में अमलीजामा पहनाना है तो यह नितान्त महत्वपूर्ण है कि झरनों को इन पर्वतीय राज्यों की जल नीति के केंद्र बिंदु में रखा जाए। निःसन्देह यदि सकारात्मक प्रयास किये जाएं तो पर्वतीय क्षेत्रों में केवल इन झरनों के कुशल प्रबंधन मात्र से ही प्रत्येक कंठ व प्रत्येक खेत को पर्याप्त पानी सुनिश्चित कराया जा सकता है।

''साभारः राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन (एन.एम.एच.एस) एवं राष्ट्रीय जलविज्ञान परियोजना (एन.एच.पी.) के अंतर्गत की गयी गतिविधियों से प्राप्त अनुभवों के आधार पर।''

संपर्क करें:
डॉ. सोबन सिंह रावत,
डॉ. सुधीर कुमार एवं
डॉ. दीपक सिंह बिष्ट
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रूड़की